भाकृअनुप
ICAR

गेहूँ एवं जौ
स्वर्णिमा

बारहवाँ अंक–2020

भाकृअनुप–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान

करनाल–132001, भारत

ICAR-Indian Institute of Wheat and Barley Research

Karnal-132001, India

पर्वतीय क्षेत्रों में महिला कृषक सशक्तिकरणः मुद्दे एवं संभावनाएं

कुशाग्रा जोशी एवं निर्मल चंद्रा
भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

भारत जो कि कृषि प्रधान देश है, उसमें महिलाएँ ही कृषि की रीढ़ हैं। कृषि में महिलाओं का योगदान केवल शारीरिक श्रम के रूप में ही नहीं अपितु गुणवत्ता एवं उत्पादन वृद्धि में भी अहम है। पर्वतीय क्षेत्रों में जीविकावृत्ति पेशों में महिलाओं के योगदान के साथ–साथ वे गृह कार्य के लिए भी उत्तरदायी हैं। पर्वतीय कृषि तो वैसे ही विषम भौगोलिक स्थिति के कारण जटिल है, साथ ही आधुनिकरण में काफी पीछे है। कृषक महिलाओं के पास कृषि कार्यों को करने के लिए उचित यंत्र नहीं हैं। वे पुराने यंत्रों जैसे कुटला, दराती से ही सारे कृषि कार्य करती हैं। खेती की जमीन बहुत अधिक होने पर भी महिलाएँ नये यंत्रों को उपयोग में न लाकर पुराने यंत्रों को ही प्रयोग में लाती हैं। यही कारण है कि पर्वतीय महिलाओं को कई प्रकार की शारीरिक परेशानियों और थकान का सामना करना पड़ता है। उत्तराखण्ड में लगभग 70 प्रतिशत लोगों की आजीविका का मुख्य साधन कृषि है। यहाँ का 86 प्रतिशत भाग पर्वतीय क्षेत्र है। यह क्षेत्र छोटे व बँटे हुए खेत, वर्षा आश्रित कृषि, विरल आबादी एवं पुरुष पलायन जैसी बाधाओं को दर्शाता है। उत्तराखण्ड में महिलाओं को पर्वतीय अर्थ व्यवस्था की रीढ़ माना जाता है। मैदानी क्षेत्रों के विपरीत पर्वतीय क्षेत्रों में महिलाओं को ईंधन, चारा व पानी लाने के लिए ऊँचे–नीचे रास्तों में कई किलोमीटर चलना पड़ता है। इसके अतिरिक्त महिलाएँ कृषि कार्य जैसे – रोपाई, निराई–गुड़ाई, कटाई और फसल प्रसंस्करण जैसी अधिक श्रम व समय लेने वाली गतिविधियों में संलग्न रहती हैं। ग्रामीण भारत में मौजूदा सामान्य प्रवृत्ति की वजह से संसाधनों की उपलब्धता महिलाओं के लिए सीमित है। कई ऐसे कई ध्यान देने योग्य मुद्दे हैं जो पर्वतीय पारिस्थितिक तंत्र में महिला किसानों को पूर्ण क्षमता प्राप्ति में बाधा डालते हैं जिनका उल्लेख निम्नवत हैः

उत्तराखंड में कार्य सहभागिता दर

उत्तराखंड में विशेष रूप से विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में महिलाओं की आबादी के महत्वपूर्ण योगदान के कारण जनसंख्या की कार्य भागीदारी दर राष्ट्रीय स्तर से काफी अधिक है। 2011 की जनगणना के अनुसार, कृषि में महिला के लिए कार्य की भागीदारी दर कृषक के रूप में 64 प्रतिशत और कृषि श्रमिक के रूप में 8.84 प्रतिशत है। दिलचस्प बात यह है कि केवल 28.82 प्रतिशत पुरुषों की पहचान कृषक और 11.23 प्रतिशत की पहचान कृषि मजदूर के रूप में की गई। इन आंकड़ों में केवल एक अन्य राज्य हिमाचल प्रदेश सबसे ऊपर है, जहाँ 76.24 प्रतिशत महिला कामकाजी

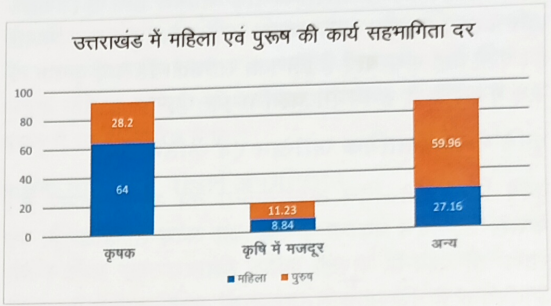

आबादी की पहचान काश्तकारों के रूप में की गई, और यह भी एक पर्वतीय राज्य है। पिछले कुछ वर्षों में राज्य में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की कार्य सहभागिता दर काफी हद तक लगातार बढ़ रही है, क्योंकि पुरुषों के अन्य शहरों एवं राज्यों में प्रवास के कारण महिला प्रधान परिवारों में वृद्धि हुई है। लगभग सभी कृषि कार्यों में महिलाएँ भाग लेती हैं जबकि पुरुष सदस्यों की भागीदारी सीमित संख्या में होती है। एक अध्ययन के अनुसार उत्तराखंड के कुमाऊं क्षेत्र में बहुसंख्यक महिलाएँ निराई–गुड़ाई और घर तक उत्पादन ले जाने (83.33 प्रतिशत) जैसी गतिविधियों में सक्रिय रूप से शामिल थी, इसके बाद फसल कटाई (78.33 प्रतिशत), कटाई (70.00 प्रतिशत), बुवाई (65.00 प्रतिशत), रोपाई (61.67 प्रतिशत) और बीज उपचार (58.33 प्रतिशत) (विपकृअनुसं अल्मोड़ा, 2015)। पहाड़ी महिलाएँ व्यक्तिगत रूप से भूमि जुताई, सिंचाई और खरीद/विपणन जैसी गतिविधियों में भाग नहीं लेती थी, हालांकि उन्होंने इन गतिविधियों में अपने पुरूष समकक्षों के साथ संयुक्त रूप से भाग लिया क्योंकि यह गतिविधियाँ आमतौर पर पुरूष बाहुल्य गतिविधियाँ थीं।

कृषक के रूप में पहचान न होना

आर्थिक परिभाषा में 'कृषक' होने की पहचान इस बात से तय होती है कि जमीन का मालिकाना हक किसके पास है, इस बात से नहीं कि उसमें श्रम किसका और कितना लग रहा है और इसे विडम्बना ही कहा जाएगा कि भारत में महिलाओं को भूमि का मालिकाना हक ना के बराबर है। यहीं कारण है कि 'कृषि क्षेत्र' में उनकी निर्णायक भूमिका नहीं है। निर्णायक भूमिका न होना सशक्तिकरण में एक महत्वपूर्ण बाधा है। कृषि भूमि पर मालिकाना हक महज एक प्रशासनिक पहलू नहीं है, बल्कि इसका सामाजिक–आर्थिक निहितार्थ भी है। यह भी समझने की आवश्यकता है कि पुरुषों के पलायन के कारण कृषि कार्य पुरुषों से ज्यादा महिलाओं के हाथ में चला गया है, इसके बावजूद महिलाएँ